कहा जाता है कि बाल्यकाल से ही वे बड़े मेधावी थे। विद्यापति के गुरु का नाम हरिमित्र था। शिक्षा समाप्त करने के बाद वे राजा कीर्तिसिंह के दरबार में गये। कीर्तिसिंह की प्रशंसा में इन्होंने 'कीर्तिलता' और 'कीर्ति पताका' की रचना की।

विद्यापति संस्कृत के प्रकाण्ड पंडित थे। संस्कृत भाषा पर उनका असाधारण अधिकार था। उन्होंने संस्कृत में 11 रचनाएँ की हैं। संस्कृत के साथ प्राकृत, अपभ्रंश और मैथिली के महान पंडित थे। विद्यापति की कीर्ति का आधार उनकी लोकभाषा मैथिली की कृति 'पदावली' ही है। आपको मैथिल कोकिल कहा जाता है। कृष्ण काव्य माधुर्य के कारण 'अभिनव जयदेव' भी कहा जाता है।

चंदबरदाई

आचार्य रामचंद्र शुक्ल के कथनानुसार चंदबरदाई हिंदी के प्रथम महाकवि हैं और उनका 'पृथ्वीराज रासो' हिंदी का प्रथम महाकाव्य है। इनका जन्म 1168 ई. को माना जाता है और रासो के अनुसार ये चंद्रभट्ट जाति के, जगात नामक गोत्र के थे। वे दिल्ली नरेश पृथ्वीराज चौहान के अंतरंग मित्र, सामंत और राजकवि माने जाते हैं।

पृथ्वीराज को जब मुहम्मद गोरी बंदी बनाकर अपने देश ले गये थे, तब चंदबरदाई भी उनके साथ गये थे, और अपने अधूरे 'रासो' को अपने पुत्र जल्हण को सौंप दिया था। इस संबंध में 'पुस्तक जल्हण हथ्य दै, चलि गज्जन नृप बाज' उक्ति प्रसिद्ध है।

कहा जाता है कि पृथ्वीराज और चंदबरदाई का जन्म एक ही दिन हुआ था और दोनों ने एक ही दिन इस संसार को छोड़ा था।

कबीरदास

कबीरदास, हिंदी साहित्य के भक्तिकाल की निर्गुण काव्यधारा की ज्ञानाश्रयी शाखा के प्रमुख संत कवि हैं। गवेषणाओं के आधार पर उनका जन्म संवत् 1456 में, काशी में माना गया।

किंवदंती है कि वे एक विधवा ब्राह्मणी के गर्भ से उत्पन्न हुए पर नीरु-नीमा नामक जुलाहा दंपति ने उनका पालन-पोषण किया।

कबीर अनपढ़ थे। छंद शास्त्र और अलंकारों के शास्त्रीय ज्ञान से वे वंचित थे। मसि, कागज न छूकर और कलम हाथ न पकड़कर भी वे कवि कहलाये। उनके अनुसार 'ढाई अक्षर प्रेम का पढै सो पंडित होय' सिर्फ प्रेम का ढाई अक्षर पढ़कर पंडित बन जाएगा।

समाज में व्याप्त बाह्याडंबर, अंधविश्वास, मूर्तिपूजा, छुआछूत आदि का विरोध किया। अनपढ़ जनता को जागरूक बनाकर जीवन मूल्यों के प्रचार के लिए वे दोहों एवं पदों में गाते हुए घूमते थे। इनकी वाणी को इनके शिष्य धर्मदास ने लिपिबद्ध किया था जो 'बीजक' कहलाया गया। इसके तीन भाग हैं-साखी, सबंद और रमैनी। उनके काव्य की भाषा 'सधुक्कडी' मानी जाती है।

जायसी

मल्लिक मुहम्मद जायसी का जन्म सन् 1475 ई. के लगभग माना गया है। आप भक्तिकालीन निर्गुण भक्ति शाखा के, सुफी काव्यधारा जिसे प्रेममार्गीय शाखा भी कहा जाता है, के सुप्रसद्धि कवि हैं।

जनश्रुति के अनुसार आपकी चार रचनाएँ प्रामाणिक मानी जाती हैं। आपका 'पद्मावत' काव्य कृति हिंदी के सर्वश्रेष्ठ काव्यों में गिनी जाती है।

जायसी की कविता में भावुकता विशेष रूप से प्राप्त होती है। पद्मावत् में वियोग-श्रृंगार का हृदय-ग्राही वर्णन आपने किया है। इसकी भाषा अवधी है। पद्मावत् दोहा चौपाई शैली में लिखा गया प्रबंध काव्य है।

जायसी रहस्यवादी कवि थे और उन्होंने 'पद्मावत्' में लौकिक प्रेम वर्णन द्वारा आध्यात्मिक प्रेम की गंभीर व्यंजना की है।

जायसी की भाषा ठेठ अवधी है और दोहा-चौपाई शैली को प्रबंध-काव्य में प्रतिष्ठित कराने का श्रेय उन्हीं को है।

सूरदास

हिंदी साहित्य के अनन्य विभूति, भक्तिकाल की कृष्ण भक्ति शाखा के सर्वश्रेष्ठ कवि, हिंदी साहित्याकाश के सूर्य, अष्टछाप के मुकुट मणि, गोपिकाओं के रूप में विरह की साक्षात् प्रतिमा, 'पुष्टिमार्ग के जहाज' और ब्रजभाषा के वाल्मीकि-सूरदास का जन्म लगभग 1478 ई. में आगरा और मथुरा के बीच रुनकत नामक गाँव में सारस्वत ब्राह्मण परिवार में हुआ था।

उनके जन्मांध होने या बाद में अंधत्व प्राप्त करने के विषय में अनेक किवदंतियाँ हैं। उनके पद विनय और दैन्य भाव के होते थे। श्री वल्लभाचार्य के संपर्क में आने के बाद श्री वल्लभाचार्य ने सूरदास को पुष्टिमार्ग में दीक्षा दी। कृष्ण के प्रति भक्ति-भाव में डूबकर, आंतरिक प्रेरणा से सख्य, वात्सल्य और माधुर्य भाव से परिपूर्ण पद गाये। इन सभी पदों का संकलन 'सूरसागर' में है। 'सूरसागर' में विष्णु के विभिन्न अवतारों का संक्षिप्त वर्णन है। दशम स्कंध में कृष्णावतार का विस्तार से वर्णन है। सूरदास ने कृष्ण की बाल लीलाओं का जो वर्णन किया, वह विश्व-साहित्य में बेजोड़ माना जाता है।

सूरदास के तीन ग्रंथ प्रामाणिक माने जाते हैं-सूर सागर, सूर सारावली और साहित्य लहरी। सूरदास ने ब्रज-भाषा में साहित्य-रचना की थी। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने लिखा कि सूर वात्सल्य और श्रृंगार का कोना-कोना झाँक आये।

तुलसीदास

तुलसीदास भक्तिकाल की रामभक्ति शाखा के प्रमुख कवि हैं। उनका जन्म उत्तर-प्रदेश के राजापुर गाँव में संवत् 1554 में श्रावण शुक्ल सप्तमी को हुआ था। इनके माता-पिता का नाम हुलसी और आत्माराम दुबे था। जनश्रुति के आधार पर, बाल्यकाल में माता-पिता द्वारा परित्यक्त होने के कारण मुनिया नामक दासी ने उनका पालन-पोषण किया।

INSTRUCTIONAL MEDIA CENTRE * MANUU
IMC LIBRARY
* Hyderabad-34. *

पत्नी रत्नावली की प्रेरणा से वे रामभक्ति की ओर उन्मुख हुए। बाबा नरहरिदास उनके गुरु माने जाते हैं। उनकी भक्ति दास्य-भक्ति है। रामचरित मानस, विनय-पत्रिका, कवितावली, गीतावली, दोहावली, कृष्णगीतावली, पार्वती मंगल, जानकी मंगल आदि इनकी प्रमुख रचनाएँ हैं।

तुलसी समन्वयवादी कवि थे। निर्गुण-सगुण, राम-कृष्ण-सभी प्रकार की भक्ति का प्रतिपादन किया। उन्होंने अवधी और ब्रज दोनों भाषाओं में काव्य-रचना कर भाषा संबंधी समन्वयवादी दृष्टिकोण का परिचय दिया। लोकमंगल की भावना से ओत-प्रोत इनके काव्य व्यक्तित्व के कारण जार्ज-ग्रियर्सन ने तुलसी को अपने युग का 'लोकनायक' माना।

प्रबंध-सौष्ठव, चरित्र-चित्रण, प्रकृति-चित्रण, अलंकार-विधान, भाषा और छंद-प्रयोग की दृष्टि से 'रामचरित मानस' अद्वितीय महाकाव्य है। मानव मूल्यों की चेतना जागृत करने की दृष्टि से यह काव्य अप्रतिम है।

मीराबाई

मध्ययुग की कृष्ण भक्त कवयित्री मीराबाई का जन्म सं.1555 वि. को कुडकी नामक ग्राम में हुआ था। 1573 वि. में इनका विवाह मेवाड़ के पराक्रमी महाराणा सांगा के ज्येष्ठ पुत्र कुँवर भोजराज के साथ हुआ।

बालयावस्था से ही गिरिधर-लाल को अपने जीवन और प्रेम का आधार माननेवाली मीरा, बाल्यावस्था से ही कृष्ण की भक्त बन गयी। चित्तौड वंश की कुलवधू होने के कारण, अपने भक्ति-मार्ग में अनेक रुकावटें आयीं। अपनी अनन्य भक्ति, आत्म-विश्वास एवं साहस के कारण मीराबाई अपने मार्ग पर अविचल रही। कष्टों को सहन करती-करती वह अंत में गिरिधर नागर की प्रिय क्रीड़ा-भूमि वृंदावन पहुँच गयी। वहीं पर सन् 1603 में मीरा की लौकिक लीला समाप्त हो गयी।

'मेरे तो गिरिधर गुपाल, दूसरो न कोई' घोषणा करते हुए, मीराबाई कृष्ण की अनन्य भाव से उपासना करती थी। मीरा के पदों में श्रृंगार रस के संयोग और वियोग वर्णन के मर्म स्पर्शी वेदना, भक्ति की तन्मयता, मीरा को भक्ति की साधिका के रूप में स्थापित करते हैं।

मीरा की पदावली, गीत गोविंद की टीका, नरसो जी का मायरा, राग-सोरठ, उनकी प्रसिद्ध रचनाएँ मानी जाती हैं।

भाव विभोर होकर मीरा ने जो पद गाये, उनमें सरलता, सुमधुरता और सरसतापूर्ण शब्दावली दृष्टिगोचर होती है। मीरा के पदों में राग-रागनियों का समावेश है और वे गायकों का कंठहार है। मीरा के पदों में हिंदी गीतिकाव्य की उत्कृष्ट अभिव्यक्ति है।

नंददास

नंददास कृष्ण-भक्ति काव्य के 'अष्टछाप' के प्रमुख कवि हैं। अष्टछाप के आठ कवियों में सूरदास आदि हैं, उनमें सबसे छोटे नंददास हैं। वल्लभाचार्य के पुत्र विट्ठलनाथ ने नंददास को पुष्टिमार्ग में दीक्षा दी।

नंददास का जीवन-परिचय अन्य भक्त-कवियों के समान ही असंदिग्ध है। डॉ.श्यामसुंदर दास ने आपका जन्म सं.1590 माना है। पहले नंददास राम भक्त ा। उनके पुश्टिमार्ग में दीक्षित होने पर आप कृष्ण भक्त बने।

'रास पंचाध्यायी' नंददास की सबसे प्रसिद्ध रचना है। यह ग्रंथ रोला-छंद में लिखित है। माना जाता है कि नंददास का 'रास-पंचाध्यायी' हिंदी का 'गीत-गोविंद' है।

नंददास काव्य-कला के कुशल कवि थे। आपने कथात्मक काव्य की रचना की। आपके काव्य में श्रृंगार रस की प्रधानता है। नंददास की भाषा कोमल कांत पदावली से युक्त है। ध्वन्यात्मकता नंददास की कविता की विशेषता है।

रसखान

मध्ययगीन मुसलमान कृष्णभक्त कवियों में सर्वश्रेष्ठ रसखान, भक्तिकाल के सुप्रसिद्ध, लोकप्रिय और सरस कवि हैं। परंतु उनके जन्म-समय, शिक्षा-दीक्षा, कार्य-व्यवसाय, निधन काल आदि के संबंध में कोई प्रामाणिक साक्ष्य उपलब्ध नहीं है। अनुमान से उनका जन्म संवत् 1916 वि. और मृत्यु सं.1676 वि. माना जाता है।

रसखान की 'सुजान रसखान', 'प्रेमवाटिका', 'दानलीला' और 'अष्टधाम' नामक कृतियाँ प्राप्त हुई हैं।

रसखान के काव्य में दो मूल विषय हैं-भक्ति और श्रृंगार। वस्तुतः भगवद् विषयक प्रेम को ही भक्ति कहते हैं, अतः भक्त रसखान की उक्तियाँ भावुकता से ओतप्रोत हैं।

रसखान ने प्रधानतः श्रृंगार रस की व्यंजना की है जिसमें संयोग एवं वियोग दोनों का अत्यन्त मनोहर वर्णन किया गया है। कृष्ण की बाल लीलाओं का भी मधुर वर्णन इनके सवैयों में मिलता है।

रसखान ने सरस, सुबोध ब्रजभाषा में कृष्णलीला का वर्णन किया और भक्तिभावना के उत्कर्ष के कारण कृष्ण भक्त कवियों में उनका विशिष्ट स्थान है।

केशवदास

हिंदी में रीति ग्रंथों के सृजन करने में सर्वप्रथम प्रयास करनेवाले श्री केशवदास का जन्म बुंदेलखंड में सं.1613 में हुआ था और सं.1683 में आपका स्वर्गवास हुआ। केशवदास रीतिकाल के आचार्य-कवि के रूप में प्रसिद्ध हैं। आलोचक केशवदास को रीतिकाल के प्रवर्तक मानते हैं।

रामचंद्र चंद्रिका, रसिक-प्रिया, कवि-प्रिया, नख-शिख, छंदमाला, आपकी रीति ग्रंथ कृतियाँ हैं।

केशव चमत्कारवादी कवि थे और भावपक्ष की अपेक्षा कला पक्ष पर केशवदास ने अधिक ध्यान दिया है।

केशव की वर्णन-शैली प्रशंसनीय और संवादों की योजना अत्यन्त सफल है। आपकी काव्य भाषा संस्कृत-निष्ठ ब्रजभाषा है। रीतिकाल की आत्मा का साहित्यिक दृष्टिकोण में निरूपण करने और सिद्धांतों का विवेचन करने तथा उदाहरणों के लिए काव्य-सृजन करने का प्रयास सर्वप्रथम केशव ने ही किया। अतः उन्हें ही रीतिकाल का प्रवर्तक माना जाता है।

2.3.10 छंद

आदिकालीन हिंदी काव्यों में छंदों का विविधमुखी प्रयोग हुआ है। ऐसा प्रयोग इससे पहले के साहित्य में नहीं मिलता। छंद क्षेत्र में दोहा, तोटक, तोकर, गाथा, गाहा, आर्या, सट्टक, रोला, उल्लाला एवं कुंडलियाँ आदि छंदों का प्रयोग कलात्मक रीति में हुआ।

2.3.11 भाषा

आदिकाल के साहित्य में हिंदी के प्राचीनतम रूप से लेकर आधुनिकतम रूप तक सभी रूप मिलते हैं। रासो ग्रंथों की भाषा अपभ्रंश मिश्रित प्राचीन राजस्थानी है जो आज डिंगल के नाम से जानी जाती है। विद्यापति की भाषा बंगला से प्रभावित मैथिली है। अमीर खुसरो की रचनाओं में आज की खड़ीबोली जैसा रूप मिलता है। अब्दुर्रहमान के संदेशरासक की भाषा में अनेक भाषाओं का मिश्रित रूप पाया जाता है।

इस प्रकार हिंदी साहित्य के इतिहास में आदिकाल की विशेषताओं का अपना महत्व है। चंदबरदायी इस काल के प्रतिनिधि कवि माने जाते हैं। दलपति विजय का खुमान रासो, जगनिक का परमाल रासो, अमीर खुसरो की पहेलियाँ, विद्यापति की पदावली आदि उल्लेखनीय रचनाएँ हैं।

3 भक्तिकाल (वि संवत् 1375-1700 ई. तक 1318-1643)

3.1 नामकरण

हिंदी साहित्य के इतिहास में वि.सं.1375 से 1700 के बीच की कालावधि को 'भक्तिकाल' के नाम से अभिहित किया गया है। इस काल की लगभग सभी रचनाओं में भक्ति की धारा प्रभावित हुई है। भक्ति की इस मूल प्रवृत्ति के कारण इस काल को 'भक्तिकाल' का नाम दिया गया है।

3.2 युगीन परिस्थितियाँ

ईसा की 14 वीं और 15 वीं शताब्दी में संपूर्ण भारत में भक्ति की लहर चली थी। इस लहर के प्रवाहित होने में युगीन कारणों का योगदान रहा। अतः भक्तिकालीन साहित्य को समझने के लिए युग की विभिन्न परिस्थितियों को जानना आवश्यक होता है। संक्षेप में ये परिस्थितियाँ इस प्रकार रही हैं-

3.2.1 राजनीतिक परिस्थितियाँ

भक्तिकाल राजनीतिक दृष्टि से अशांत और संघर्ष का काल रहा। संवत् 1375 से 1583 तक दिल्ली पर तुगलक तथा लोधी वंश के राजाओं ने राज किया एवं 1583 से 1700 तक मुगल वंश के बाबर, हुमायूँ, अकबर, जहाँगीर एवं शाहजहाँ ने शासन किया। बाबर ने 1526 में पानीपत के मैदान में इब्राहीम लोधी को पराजित किया। बाद में राणा सांगा भी बाबर से पराजित हुआ। राजपूत कमज़ोर पड़ गए। शेरशाह सूरी ने हुमायूं को पराजित किया। शेरशाह के उत्तराधिकारी अयोग्य निकलने के कारण मुगलों का नेतृत्व अकबर के हाथ में आया। पानीपत की दूसरी लड़ाई में हेमचंद के नेतृत्व में पठानों की सेना अकबर से पराजित हुई। अकबर के सामने देश के छोटे-छोटे हिंदू एवं मुसलमान राजाओं ने घुटने टेक दिये। राजा प्रताज अकबर से आजीवन लड़ता रहा। अंततोगत्वा देश के शासक अंतिम दम तक लड़ते रहे।

भक्तिकाल में कुछ कट्टर मुस्लिम शासकों द्वारा हिंदू जनता पर कई प्रकार के अत्याचार किये गये। धर्म के नाम पर शिया तथा सुन्नी लोगों में संघर्ष चलता रहा। शासक वर्ग में भी राज्य-लिप्सा के कारण हत्याओं का क्रम चलता रहा। अलाउद्दीन खिलजी ने अपने चाचा तथा मुहम्मद तुगलक ने अपने पिता की हत्या कर राज्य प्राप्त किया।

इसके विपरीत अनेक मुसलमान शासकों ने यहाँ के साहित्य, संगीत, संस्कृत तथा कला को प्रोत्साहन भी दिया। मुसलमान शासकों के मंत्री तथा सलाहकार प्रायः हिंदू थे। विचित्र बात यह रही कि इस युग में कबीर, जायसी, तुलसी तथा सूर का युगीन राजनीतिक वातावरण से कोई सरोकार न था। इन भक्तों की वाणी धर्म और शांतिपरक रही।

3.2.2 सामाजिक परिस्थितियाँ

भक्तिकाल में हिंदुओं में जाति-पाँति तथा विवाह के बंधन कड़े रहे। हिंदुओं में धर्मपरिवर्तन हुआ करते थे। राजनीतिक अत्याचारों के आगे वे मुस्लिम धर्म को स्वीकार कर लेते थे। दूसरी ओर हिंदू तथा मुसलमानों में जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में आदान-प्रदान हुआ। परस्पर विवाह के उदाहरण भी मिलते हैं। लड़की पति का धर्म स्वीकार कर लिया करती थी। इस कारण हिंदुओं में जात-पाँत की कट्टरता बढ़ी। मुस्लिम अधिकारियों की विलासिता के कारण हिंदू समाज में पर्दा-पद्धति तथा बाल-विवाह का प्रचलन हुआ।

3.2.3 धार्मिक परिस्थितियाँ

भक्तिकाल के समय बौद्ध धर्म में अनेक विकृतियाँ फैल गईं, तो दूसरी ओर वैष्णव धर्म की परंपरा का प्रचलन बढ़ा। बौद्ध धर्म दो प्रधान संप्रदायों में विभक्त हो चुका था-हीनयान एवं महायान। हीनयान अधिक कट्टरता के कारण संकुचित होता गया तथा महायान अधिक उदारता के कारण विकृत होता गया। स्त्रियों को वश में करने के लिए विविध प्रकार के जंत्र-मंत्र के साथ वाममार्ग चल पड़ा। मंत्रयान ने वाम मार्ग की मद्य-माँस, मैथुन-मुद्रा को अपना लिया।

रामानंद ने भक्ति का द्वार सभी जाति के लोगों के लिए खोल दिया। उन्होंने जन-भाषा में अपने सिद्धांतों का प्रचार-प्रसार किया। भक्ति-साहित्य उच्चतम धर्म की व्याख्या करता है। वह लोक तथा परलोक को एक साथ स्पर्श करता है। यूँ तो भक्ति की लहर दक्षिण से परिव्याप्त हुई। शंकराचार्य से पूर्व दक्षिण में आलवार संतों में भक्ति का प्रचार हुआ। शंकर ने बौद्ध धर्म के विरुद्ध अद्वैतवाद का प्रचार-प्रसार किया। विष्णु के अवतारों में राम और कृष्ण-भक्ति का प्रचार हुआ। सूफियों ने इस्लामी वातावरण बनाया। उन्होंने प्रेमस्वरूप निराकार ईश्वर का प्रचार किया तथा एकेश्वरवादी विचरों में समन्वय का प्रयत्न किया।

3.2.4 साहित्यिक परिस्थितियाँ

हिंदुओं के उच्च वर्ग ने संस्कृत में अपने उद्‌गारों की अभिव्यक्ति की। फारसी को राजभाषा का दर्जा मिला। फारसी में इतिहास ग्रंथों की रचना हुई। संस्कृत के अनेक धार्मिक और ऐतिहासिक रचनाओं का फारसी में अनुवाद हुआ। भक्ति साहित्य में भारतीय संस्कृति तथा आचार-विचार की रक्षा हुई। उच्च कोटि के काव्य रचे गए। अतः कुछ विद्वानों ने भक्ति काल को स्वर्ण-युग के नाम से अभिहित किया।

3.3 हिंदी साहित्य में भक्ति का उदय

हिंदी साहित्य में भक्ति के उदय को लेकर काफी मतभेद हैं। कई विद्वानों ने भक्ति के उदय को राजनीतिक पराजय का परिणाम माना है, तो कुछ विद्वानों ने इसे अविछिन्न सांस्कृतिक, धार्मिक तथा सामाजिक भावना का परिणाम माना। पाश्चात्य विद्वान वेवर, कीथ, ग्रियर्सन और विलसन आदि ने भक्ति को ईसाई धर्म की देन कहा है। डॉ.सत्येंद्र ने भक्ति के उदय को द्राविड़ों से माना है। उन्होंने लिखा है-"भक्ति द्राविड़ी उपजी लाये रामानंद।"

3.4 भक्ति साहित्य: सामान्य प्रवृत्तियाँ

भक्तिकाल में भक्ति की दो मुख्य धाराएँ प्रवाहित हुईं-निर्गुण एवं सगुण। एक-ए धारा की दो-दो शाखाएँ बनीं। निर्गुण धारा के अंतर्गत संत काव्य (ज्ञानाश्रयी शाखा) त सूफी काव्य (प्रेममार्गी शाखा); और सगुण धारा के अंतर्गत रामभक्ति शाखा तथा कृष्णभक्ति शाखा।

भक्तिकाल की उक्त चार शाखाओं की सामान्य प्रवृत्तियाँ संक्षेप में निम्नलिखित हैं-

3.5 संत काव्य (ज्ञानाश्रयी शाखा) की सामान्य विशेषताएँ

संत काव्य में आध्यात्मिक विषयों की अभिव्यक्ति मिलती है। यह काव्य जन-जीवन अनुभूतियों से भरा पड़ा है। इस काव्य ने अनेक धार्मिक संप्रदायों को आत्मसात् किया। स साहित्य साधना, काव्य-वैभव, सभी दृष्टियों से महत्वपूर्ण है। यहाँ निम्नलिखित शीर्षकों में स साहित्य की सामान्य प्रवृत्तियों का उल्लेख किया जा रहा है-

3.5.1 निर्गुण ईश्वर में विश्वास

सभी संतों का विश्वास निर्गुण ईश्वर में है। संत कवियों ने ईश्वर के सगुण रूप विरोध किया है। संतों के विश्वासानुसार ईश्वर अविगत, अजन्मा, निर्विकार है। वह घट-घ में विराजमान है। वेद, पुराण एवं स्मृतियाँ ईश्वर तक पहुँचने में असफल है।

3.5.2 बहुदेववाद एवं अवतारवाद का विरोध

संत कवियों में बहुदेववाद एवं अवतारवाद के प्रति अविश्वास व्यक्त किया है। ब निर्भीकता से इन कवियों ने इस भावना का खंडन किया है। इसके स्थान पर संतों एकेश्वरवाद का प्रबल समर्थन किया। मुसलमान शासक एकेश्वरवादी थे। शंकराचार्य अद्वैतवाद का प्रभाव भी शेष था। बहुदेववाद एवं अवतारवाद के कारण विवेच्य काल के हि समाज में एकता का अभाव था। अतः युगीन संत कवियों ने हिंदू-मुस्लिम दोनों जातियों विद्वेष को शांत कर उनमें एकता की स्थापना के लिए एकेश्वरवाद का संदेश सुनाया।

3.5.3 सद्गुरु का महत्व

संत कवियों ने सद्गुरु को उच्चतम स्थान दिया है। इन कवियों का विश्वास है कि गु

गुरु गोविंद दोऊ खड़े, काके लागूं पाई।

बलिहारी गुरु आपने जिन गोविंद दियो बताई।।

सद्‌गुरु का महत्व सगुण भक्त कवियों ने भी माना है। पर, यह भावना निर्गुण भक्त कवियों में अधिक है।

3.5.4 जाति-पाँति के भेद-भाव का विरोध

संत कवि सार्वभौम मानव-धर्म के प्रतिपादक थे। इसलिए उन्होंने समाज में परिव्याप्त जाति-भेद की भावना का घोर विरोध किया है। इस प्रकार की भावना समाज के लिए, मानव-जीवन के लिए अभिशाप था। संत कवियों की दृष्टि से सब लोगों को समान अधिकार है। उनका कहना है-

"जाति पाँति पूछे नहीं कोई, हरि को भजे सो हरि का होई।"

प्रायः सभी संत कवियों का संबंध निम्न जाति से था। अतः वे सभी आलोच्य काल में उपेक्षा के पात्र बने। संतों ने भक्ति-आंदोलन के माध्यम से समाज की इस कुरीति का घोर विरोध किया है।

3.5.5 रूढ़ियों एवं आडंबरों का विरोध

लगभग सारे संत कवियों में तत्कालीन समाज में प्रचलित रूढ़ियों, मिथ्या आडंबरों एवं अंधविश्वासों का विरोध किया और उनकी तीखी आलोचना की है। इन कवियों ने मूर्तिपूजा, तीर्थ, व्रत, रोज़ा, बाह्य आडंबरों, जाति-पाँति के भेदभाव का विरोध किया। परिणाम यह हुआ कि तत्कालीन हिंदू एवं मुसलमान, दोनों समाज चिढ़ गये थे।

3.5.6 रहस्यवाद

संत काव्य में अलौकिक प्रेम की अभिव्यक्ति हुई है, जिसे रहस्यवाद नाम दिया गया है। साधना के क्षेत्र में जो ब्रह्म है, साहित्य के क्षेत्र में वही रहस्यवाद है। संतों का रहस्यवाद पूरी तरह से भारतीय परंपरा के अनुकूल है। संत कवियों में निर्गुण ईश्वर से मिलने में तड़प है। मिलनानुभूति की अभिव्यक्ति विशुद्ध भावनात्मक है। संतों का रहस्यवाद शंकराचार्य के अद्वैतवाद और योग से प्रभावित है।

3.5.7 भजन एवं नामस्मरण

संत कवियों में ईश्वर की प्राप्ति के लिए प्रेम तथा नाम-स्मरण को आवश्यक माना है। संतों का मानना है कि भजन हो तथा नामस्मरण सब मन में ही होना चाहिए। उसमें किसी प्रकार का दिखावा नहीं होना चाहिए। उनकी दृष्टि में वेद और शास्त्र निरर्थक है-

पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुआ, पंडित भया न कोई।
ढाई आखर प्रेम का, पढ़े तो पंडित होई।।

3.5.8 श्रृंगार-वर्णन तथा विरह की मार्मिक उक्तियाँ

संतकाव्य में श्रृंगार वर्णन के साथ-साथ शांतरस का अधिक चित्रण मिलता है। संयोग एवं वियोग के दोनों पक्षों का कलात्मक वर्णन हुआ है। उपदेशात्मकता में शांत रस की अभिव्यक्ति हुई है। भक्ति में विरह की मार्मिक उक्तियाँ मिलती हैं। विरह की अनुभूति में भक्त अपने को पत्नी और परम तत्व को पति मानते हैं।

3.5.9 लोक-संग्रह की भावना

संतों की साधना में सामाजिकता अधिक है। प्रायः अधिकांश संत पारिवारिक जीवन व्यतीत करते थे। संतों ने आत्मशुद्धि पर बल दिया है। संत समाजसुधारक भी हैं। संत कवियों का समाज से गहरा संबंध था। संत कवि युगीन सामाजिक व्यवस्था से अवगत थे। सामाजिक कुरीतियों का उन्होंने खंडन किया। संत काव्य में तत्कालीन समाज प्रतिबिंबित है।

3.5.10 नारी के प्रति दृष्टिकोण

संत कवियों ने एक ओर नारी की निंदा की है, तो दूसरी ओर पतिव्रता नारी के आदर्श की प्रशंसा भी की है। संतों ने नारी को माया का प्रतीक माना है। भक्ति के क्षेत्र में कनक तथा कामिनी को बहुत बड़ा अवरोध माना गया है। नारी के कामिनी रूप को माया माना गया है।

3.5.11 माया से सावधान

माया भगवान से मिलने के मार्ग में बड़ी बाधा उपस्थित करती है। अतः संत कवियों ने माया से दूर रहने का उपदेश दिया है। संतों का विचार है कि ब्रह्मा, विष्णु, महेश भी माया के वश में है।

3.5.12 भाषा शैली

संत कवि प्रायः अशिक्षित माने गये हैं। उन्होंने बोलचाल की भाषा को अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया। अपने मत के प्रचार-प्रसार में संतों को भ्रमण करना पड़ता था। इस कारण उनकी भाषा में अन्य प्रदेशों के शब्द पाये जाते हैं। इस कारण संतों की भाषा खिचड़ी अथवा सधुक्कड़ी कहलाई। संत काव्य में प्रमुखतः गेय मुक्तक शैली का प्रयोग हुआ है। भाषात्मकता तथा संगीतात्मकता उनकी भाषा की विशेषता रही। साखी, दोहा, चौपाई शैली का प्रयोग भी हुआ है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक एवं साहित्यिक दृष्टि से संत काव्य का महत्वपूर्ण स्थान है। संतों की उपदेशात्मकता में जीवन का अमर संदेश है। विद्वान यह मानते हैं कि संत कवियों ने साहित्य को सत्य, सौंदर्य तथा शिव से संपन्न बनाया है। संत कवियों में वासना मुक्ति ही ईश्वर मिलन और मुक्ति का प्रथम सोपान है। संत काव्य में गुरु का स्थान सबसे ऊँचा है। भक्ति में सत्संग, भजन, नामस्मरण का विशेष स्थान है। इन कवियों का विश्वास आंखिन देखी पर था, न कि कागद की लेखी पर। ब्रह्मा निराकार है। वह घट-घट में विद्यमान है। ब्रह्मा की प्राप्ति गुरु के ज्ञान के बिना असंभव है। संतों ने सिद्ध किया है कि दांपत्य भाव में प्रेम की पूर्णता है। जगत की सारी वस्तुएँ माया का प्रतीक हैं। इसके निवारण के साधन-सत्संग, भक्ति तथा ब्रह्म-मिलन की इच्छा है। संत काव्य के प्रमुख कवियों में नामदेव, कबीर, रैदास, नानक देव, सुंदरदास, मूलकदास आदि उल्लेखनीय हैं।

3.6 सूफी काव्य (प्रेममार्गी शाखा) की सामान्य विशेषताएँ

भारत में हिंदू-मुसलमानों की एकता के क्षेत्र में सूफी संतों ने प्रशंसनीय कार्य किया है। इन संतों ने भक्ति में प्रेममार्ग को चुना। सूफी मत को इस्लाम धर्म का प्रधान अंग माना गया है। सूफी मत में कोई कट्टरता नहीं है। वे उदार स्वभावी थे। सूफी मत के मूल में प्रेम का निवास है। सूफी संत इश्क मजाजी को इश्क हकीकी का प्रथम सोपान मानते हैं। सूफियों की वाणी में परमात्मा और आत्मा, दूल्हा और दुलहिन होते हैं। इसके साथ-साथ लौकिक प्रेम से अलौकिक प्रेम की अभिव्यक्ति मिलती है।

भारत में सूफी मत का प्रचार 9 वीं शताब्दी से होता है। सूफियों के 14 संप्रदायों में कादरी संप्रदाय, नक्शबंदी संप्रदाय एवं चिश्ती संप्रदाय प्रमुख हैं। इन संप्रदायों का आगे चल

कर अनेक शाखाओं में विभाजन हुआ। इनके प्रचार का प्रमुख साधन संगीत रहा। 16 वीं शताब्दी में मुगल साम्राज्य के साथ सूफी मत का पतन हो गया।

सूफी संप्रदाय एकेश्वरवाद का समर्थक है। अन्य धर्मों के प्रति सहानुभूतिशील है। सूफियों के अनुसार ईश्वर जगत् के बाहर भी है और भीतर भी। ईश्वर का रूप अकल्पनीय है। ईश्वर ने अपने गूढ़ रहस्य की अभिव्यक्ति में सृष्टि की रचना की है। मानव सृष्टि सर्वश्रेष्ठ प्राणी है। नफ्स को मारना मनव का परम कर्तव्य है। ईश्वर को 70 हज़ार पर्दों के पीछे माना गया है। साधना में प्रेम की महत्ता है। सूफियों ने शैतान की सत्ता स्वीकार की है। इस संप्रदाय में भी गुरु की मान्यता है। प्रेम ईश्वर-प्राप्ति का एकमात्र साधन है। सूफियों ने ईश्वर की पत्नी रूप में और साधक की पति रूप में कल्पना की है। सूफी काव्य की सामान्य प्रवृत्तियाँ संक्षेप में निम्नलिखित हैं-

3.6.1 प्रबंध काव्य

सूफियों की प्रेम-कहानियाँ प्रबंध काव्य के अंतर्गत आती हैं। सूफियों ने लौकिक प्रेम-कहानियों के द्वारा अलौकिक प्रेम की अभिव्यक्ति की है। कवियों ने अपने काव्यों में प्रेमतत्व का निरूपण किया और प्रेम का महत्व निर्धारित किया है। कहानी की घटनाओं में आवश्यक परिवर्तन तथा परिवर्द्धन भी किया है। काव्य रूढ़ियों का अधिक प्रयोग किया है। प्रबंध काव्यों में पहले मंगलाचरण में ईश्वर की शक्ति का वर्णन, उसके बाद हज़रत मुहम्मद तथा उनके सहयोगियों की प्रशंसा की जाती है। तदनंतर अपना और पीर का परिचय, संप्रदाय का उल्लेख होता है। कथा के अंतर्गत नायक-नायिका के देश, कुल, आचार आदि का उल्लेख होता है। कथा में भारतीय काव्यों में व्यवहृत काव्य रूढ़ियों का उपयोग हुआ है। पद्मावत, मृगावती, इंद्रावती आदि प्रेम कथाओं के नायक अंत में मर जाते हैं और नायिकाएँ सती हो जाती हैं। इस प्रकार कथा का अंत दुखमय हो जाता है। पर कुछ प्रेम कथानक सुखांत भी हैं।

3.6.2 भाव व्यंजना

सूफी काव्यों का मुख्य विषय प्रेम है। कवियों ने प्रेम के वियोग पक्ष को अधिक महत्व दिया है। बारहमासा का भी अच्छा वर्णन मिलता है। सूफी रचनाओं में प्रेम-भावना के अतिरिक्त प्रसंगवश उत्साह, द्वेष, ईर्ष्या, वैर, कपट, दया आदि भावों की अभिव्यक्ति सुंदर बन

पड़ी है। कहा जाता है कि संयोग-अवस्था का वर्णन कहीं-कहीं अश्लीलता की कोटि में आ गया है।

3.6.3 चरित्र-चित्रण

सूफी प्रेम-काव्यों में नायक और नायिकाओं के जीवन के विविध प्रसंगों की अभिव्यक्ति हुई है। सूफियों ने कहीं-कहीं काल्पनिक पात्रों की सृष्टि की है। संस्कृत साहित्य के समान इनके नायक सामंती वातावरण से संबद्ध है। नायक, रामकुमार एवं पराक्रमशाली हैं, पर इनका यह रूप गौण है। क्योंकि इन काव्यों का प्रतिपादन प्रेम रहा है। काव्य के सभी पात्र प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्रेम में रह रहते हैं। राघव-चेतन जैसे भारतीय व ऐतिहासिक पात्रों में कल्पना का अधिक प्रयोग हुआ है।

3.6.4 लोक जीवन तथा हिंदू संस्कृति

सूफी प्रेम-काव्यों में लोक जीवन का चित्रण मिलता है, जैसे-साधारण अंधविश्वास, मनौतियाँ, जादू-टोना, लोकोत्सव, लोकव्यवहार, तीर्थ, व्रत आदि। भारतीय सांस्कृतिक वातावरण का सुंदर वर्णन किया गया है। हिंदू धर्म के सिद्धांतों, रहन-सहन तथा आचार-विचार का भी अच्छा वर्णन हुआ है। हिंदू पात्रों में हिंदू आदर्शों की प्रतिष्ठा की गई है। प्रसंगानुकूल भारतीय ज्योतिष, आयुर्वेद के ज्ञान का परिचय दिया गया है।

3.6.5 शैतान

भारतीय दर्शन में माया का जो स्थान है, इस्लाम में वही स्थान शैतान का है। सूफी काव्य की प्रेम कहानियों में शैतान साधक को प्रेम के साधना-मार्ग से भ्रष्ट करनेवाला माना गया है। एक साधक पीर गुरु की कृपा से शैतान के चंगुल से मुक्त हो सकता है। पद्मावत काव्य में राघवचेतन शैतान के रूप में चित्रित है। सूफी कवियों के अनुसार शैतान से साधक की अग्नि-परीक्षा होती है।

3.6.6 मंडनात्मकता

सूफी कवियों की यह विशेषता रही है कि उन्होंने किसी संप्रदाय विशेष का खंडन नहीं किया, बल्कि दोनों जातियों के एकता के उद्देश्य में उनकी मंडनात्मकता प्रशंसनीय रही है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के शब्दों में-"प्रेम स्वरूप ईश्वर को सामने लाकर सूफी कवियों ने हिंदू

और मुसलमान दोनों को मनुष्य के सामान्य रूप में दिखाया और भेदभाव के दृश्यों को हटाकर पीछे कर दिया।"

3.6.7 नारी-चित्रण

सूफी काव्य में नारी परमात्मा का प्रतीक है। नारी ही वह नूर है, जिसके बिना सारा संसार सूना माना गया है। सूफी काव्य में प्रेम का प्रमुख स्थान नारी को माना गया है। प्रेम काव्यों में स्वकीया और परकीया, दोनों का चित्रण है।

3.6.8 रस

सूफी प्रेमाख्यानों में मुख्य रूप से श्रृंगार रस की अभिव्यक्ति हुई है। पहले नायक, नायिकाओं से आकर्षित होता है। उसकी प्राप्ति के लिए विरह-वेदना को झेलना पड़ता है। कवियों ने संयोग श्रृंगार के वर्णन में उतनी रुचि नहीं दिखाई है, जितनी कि वियोग श्रृंगार के वर्णन में दिखाई है। कहा जाता है कि इनके श्रृंगार वर्णन पर कामशास्त्र का प्रभाव है। श्रृंगार रस के अतिरिक्त पद्मावत काव्य में गोरा-बादल युद्ध के प्रसंग में वीर रस की सुंदर अभिव्यंजना हुई है। कहीं-कहीं पर करुण, शांत तथा बीभत्स रसों की अभिव्यक्ति भी हुई है।

3.6.9 काव्य के प्रकार

साहित्य-शास्त्र के अनुसार सूफियों की प्रेममूलक रचनाएँ महाकाव्य की कोटि में आती है। लेकिन उनमें भारतीय महाकाव्यों की तरह सर्गबद्धता नहीं मिलती। इन रचनाओं में नायक के उच्च कुल का ध्यान नहीं रखा गया है। क्योंकि कवि का लक्ष्य महान चरित्र की सृष्टि करना नहीं था, केवल प्रेमतत्व का प्रतिपादन करना था।

सूफी रचनाओं में प्रबंध शैली के अतिरिक्त मुक्तक शैली का भी प्रयोग हुआ है। मुक्तक शैली में दोहा, चौपाई, कुंडलियाँ आदि छंदों का प्रयोग हुआ है। जायसी ने अपने प्रबंध काव्य में दोहा-चौपाई शैली को अपनाया है।

3.6.10 भाषा

सूफी प्रेमाख्यानों की भाषा प्रायः अवधी रही है। उसमान तथा नसीर पर भोजपुरी का प्रभाव मिलता है। नूर मुहम्मद ने कहीं-कहीं ब्रज भाषा का भी प्रयोग किया है। कवियों की अवधी भाषा में मुहावरों एवं लोकोक्तियों का सुंदर प्रयोग हुआ है।

3.6.11 छंद

सूफी कवियों ने दोहा-चौपाई शैली को अपनाया है। इन काव्यों में सोरठे, सवैये, बरवै आदि छंदों का प्रयोग कहीं-कहीं पर हुआ है।

सूफी संतों के कवियों में प्रेम पीर के प्रचारक कवि मलिक मुहम्मद जायसी प्रतिनिधि कवि हैं।

3.7 सगुण भक्ति धारा

हिंदी साहित्य के भक्ति काल की दूसरी धारा सगुण है। सगुण संप्रदाय वैष्णव धर्म से पोषण प्राप्त करता है। सगुण धारा की दो शाखाएँ हैं-रामभक्ति शाखा तथा कृष्णभक्ति शाखा। इन दोनों शाखाओं में ईश्वर सगुण है। अवतारवाद सगुणोपासना का एक प्रमुख अंग है। इसमें लीलावाद का महत्व है। मर्यादा पुरुषोत्तम राम तथा लोकरंजक श्रीकृष्ण, दोनों लीलीकारी हैं। भगवान् की भक्ति तथा प्रेम का उद्देश्य है, उसकी निकटता प्राप्त करना, उसमें रमण करना, उसकी लीलाओं में अपने को लीन करना। सगुणधारा के भक्त कवियों ने भी गुरु की महत्ता को स्वीकार किया है। उनके अनुसार गुरु ब्रह्म का प्रतिनिधि है। राम-काव्य तथा कृष्ण-काव्य दोनों में लोक-जीवन का पूरा चित्रण हुआ है।

3.7.1 रामभक्ति शाखा की सामान्य प्रवृत्तियाँ

रामानंद ने उत्तर भारत में रामभक्ति का प्रचार किया। रामभक्ति साहित्य की सामान्य प्रवृत्तियों का संक्षिप्त परिचय निम्ननिलिखित रूप में प्रस्तुत है-

3.7.1.1 राम का स्वरूप

रामभक्त कवियों के उपास्यदेव दशरथनंदन श्री राम हैं। राम विष्णु के अवतार हैं था परब्रह्म स्वरूप हैं। धर्मोद्धार के लिए वे हर युग में अवतार लेते हैं। राम में शील, शक्ति तथा सौंदर्य का समन्वय है। इनका लोकरक्षक रूप प्रधान है। वे अपनी शक्ति से दुष्टों का संहार करते हैं। अपने शील गुण से लोक को आचार की शिक्षा देते हैं। सौंदर्य में त्रिभुवन को लजाते हैं। अपनी करुणा से पतितों का उद्धार करते हैं।

3.7.1.2 समन्वयात्मकता

राम-काव्य में विराट समन्वय की भावना है। इसमें राम की उपासना के साथ-साथ कृष्ण, शिव, गणेश आदि देवताओं की स्तुति की गई है। कवियों की भावना बहुत उदार है। रामभक्त कवियों ने ज्ञान, भक्ति तथा कर्म के बीच समन्वय स्थापित करने का प्रशंसनीय प्रयास किया है।

3.7.1.3 लोक-संग्रह की भावना

रामभक्त कवियों ने गृहस्थ जीवन की उपेक्षा नहीं की। उन्होंने लोकसेवी आदर्श गृहस्थ राम और सीता को प्रस्तुत कर अपने जीवन-स्तर को ऊँचा उठाने का प्रयास किया है। राम-काव्य अनेक प्रकार के आदर्शों से भरा पड़ा है। राम आदर्श पुत्र तथा आदर्श राजा हैं, सीता आदर्श पत्नी है, कौशल्या आदर्श माता है, लक्ष्मण और भरत आदर्श भ्राता हैं, हनुमान आदर्श सेवक है, सुग्रीव आदर्श सखा है। आदर्श की प्रतिष्ठा कवियों की इति है।

3.7.1.4 भक्ति का स्वरूप

रामभक्त कवि राम के शील, शक्ति एवं सौंदर्य पर मुग्ध हैं। रामभक्त कवियों ने अपने और राम के बीच सेवक-सेव्य-भाव को स्वीकार किया है। इन्होंने रामभक्ति को सर्वश्रेष्ठ बताया है। ये कवि विशिष्टाद्वैतवाद से प्रभावित हैं। इनके अनुसार जीव और ब्रह्म में अंश-अंशी भाव है।

3.7.1.5 पात्र तथा चरित्र-चित्रण

रामकथा के पात्र महान हैं, अनुकरणीय हैं। राम-काव्य के पात्र आचार तथा लोकमर्यादा का आदर्श रूप प्रस्तुत करते हैं। रामकाव्य में सत्य की असत्य पर अर्थात् रामत्व की रामणत्व पर विजय दिखलाई गयी है। राम ब्रह्म होते हुए भी मानवस्वरूप में लीला करते हैं।

3.7.1.6 काव्य-शैली

रामकाव्य में विविध शैलियों की रचनाएँ मिलती हैं। रामचरितमानस में वीरगाथाओं की प्रबंध शैली है। गीतावली में गीति-पद्धति, हनुमन्नाटक में संवाद-पद्धति है। तुलसीदास की रचनाओं में चरित काव्य, अध्यात्म तथा धर्म नीति में उपदेश, विनय के पद, लीला के पद आदि का उल्लेख मिलता है।

3.7.1.7 रस

रामकाव्य में सभी प्रकार के रसों का प्रयोग हुआ है। शांत रस की प्रधानता है। कहा जाता है कि राम मर्यादा पुरुषोत्तम हैं, भक्त कवि मर्यादावादी हैं, इसीलिए राम साहित्य में श्रृंगार रस के संयोग तथा वियोग पक्षों का पूरा परिपाक नहीं हो सका है। तुलसी कृत रामचरितमानस में सभी का प्रयोग हुआ है। युद्धों के वर्णन में वीर तथा रौद्र रस है। नारद मोह में हास्य रस मिलता है। राम के विलाप तथा लक्ष्मण की मूर्च्छा प्रसंग में करुण रस का प्रयोग हुआ है। राम के ब्रह्मत्व की अभिव्यक्ति में अद्भुत रस तथा भक्ति रस है।

3.7.1.8 छंद

रामकाव्य में अनेक छंद मिलते हैं। छप्पम, दोहा, चौपाठ, कुंडलियाँ, सोरठा, सवैया, तोमर, घनाक्षरी आदि छंदों का प्रयोग हुआ है।

3.7.1.9 भाषा

रामकाव्य की भाषा प्रधान रूप से अवधी है। केशव की रामचंद्रिका में ब्रजभाषा का प्रयोग है। तसल ने अवधी के साथ-साथ ब्रज का भी प्रयोग किया है। रामकाव्यों में भोजपुरी, बुंदेलखंडी, राजस्थानी, संस्कृत तथा फारसी के शब्दों का प्रयोग है।

हिंदी के श्रेष्ठ कवि तुलसीदास रामकाव्य के प्रतिनिधि कवि हैं।

3.7.2 कृष्णभक्ति शाखा

हिंदी में कृष्ण-काव्य का प्रारंभ विद्यापति से माना जाता है। सूरदास के माध्यम से कृष्ण-काव्य को अत्यन्त लोकप्रियता मिली। कृष्ण-भक्ति के प्रचार-प्रसार में पुष्टि मार्ग के अंतर्गत अष्टछाप के कवियों ने अमूल्य योगदान दिया। इन कवियों में सूरदास के साथ कुंभनदास, परमानंददास, कृष्णदास, छीतस्वामी, गोविंद स्वामी, चतुर्भुजदास तथा नंददास हैं। राधावल्लभ संप्रदाय, गोड़ीय संप्रदाय एवं निम्बार्क संप्रदाय के कवियों ने कृष्णभक्ति काव्य के विकास में सहयोग दिया।

इस दिशा में राजस्थान की प्रसिद्ध कवयित्री मीराबाई का नाम भी उल्लेखनीय है। इनकी रसिक, ललित किशोरी आदि के नाम उल्लेनीय है। आनंदघन भी कृष्णभक्त कवि हैं। आधुनिक काल में भारतेंदु जी हैं। इस काल में कृष्ण मानव रूप में चित्रित है। इस दृष्टि से हरिऔध कृत

INSTRUCTIONAL MEDIA CENTRE LIBRARY * MANUU * HYDERABAD
Accn. No ML-075
Date 03.08.2015
INSTRUCTIONAL MEDIA CENTRE * MANUU * IMC LIBRARY Hyderabad-34.

'प्रियप्रवास' उल्लेखनीय है। इसके अतिरिक्त जगन्नाथदास रत्नाकर, सत्यनारायण, कविरत्न, वियोगी हरि, मैथिलीशरण गुप्त का नाम गिना जा सकता है।

मध्ययुगीन कृष्ण-भक्ति काव्य तत्कालीन अनेक संप्रदायों से प्रभावित रहा है, जैसे- विष्णु गोस्वामी का विष्णु संप्रदाय, निम्बार्काचार्य का निम्बार्क संप्रदाय, मध्वाचार्य का माध्व संप्रदाय, रामानुज का श्री संप्रदाय, रामानंद का रामनंदी संप्रदाय, वल्लभाचार्य का वल्लभ संप्रदाय, चैतन्य महाप्रभु का चैतन्य संप्रदाय, हित हरिवंश का राधा वल्लभी संप्रदाय, स्वामी हरिदास का सखी संप्रदाय आदि। कृष्णभक्ति का एकमात्र आधार प्रेम है। सभी संप्रदायों में कृष्ण की माधुर्य भाव की भक्ति का प्रतिपादन हुआ है। सत्संग एवं गुरु-महिमा को महत्व दिया गया है।

कृष्णभक्ति की सामान्य प्रवृत्तियाँ

3.7.2.1 कृष्ण जी की लीलाओं का वर्णन

युगीन कवियों ने लोकरंजनकारी कृष्ण की लीलाओं का गान किया। लीला का प्रयोजन लीलानंद के लिए रहा। कवियों ने लीला के अनेक रूपों की कल्पना की है। जैसे-बालगोपाल की वात्सल्यपूर्ण लीलाएँ, सख्य रूप में लीलाएँ, माधुर्य भावपूर्ण लीलाएँ आदि। सभी संप्रदायों में माधुर्य भाव का महत्व अधिक है। सूरदास के काव्य में कृष्ण की प्रेम-लीलाओं का अधिक वर्णन हुआ है।

3.7.2.2 मौलिक उद्‌भावना

विषय-वस्तु में कृष्णभक्त कवियों ने अनेक मौलिक उद्‌भावनाओं से काम लिया है। उदाहरण के लिए भागवतकार के कृष्ण निर्लिप्त हैं, वे गोपियों की प्रार्थना पर लीला में भाग लेते हैं। किंतु हिंदी कवियों के कृष्ण स्वयं गोपियों की ओर उन्मुक्त होते हैं। भागवत में राधा का नामोल्लेख नहीं है, जबकि सूरदास जैसे कवि ने राधा का प्रणय-चित्रण किया है। कवियों ने युगीन वातावरण के अनुसार नवीन प्रसंगों की उद्‌भावना की है।

3.7.2.3 रस

हिंदी कृष्ण-काव्य में प्रायः एक ही रस का प्रवाह मिलता है, जिसे ब्रजरस अथवा भक्तिरस कहा गया है। कुछ विद्वानों ने इसे वात्सल्य, शांत और श्रृंगार रस कहा है। वात्सल्य तथा श्रृंगार रस अद्वितीय है। सूरदास वात्सल्य रस के सम्राट माने गये हैं। श्रृंगार के संयोग

तथा वियोग, दोनों पक्षों का वर्णन अद्‌भुत है। इसके अतिरिक्त वीर, अद्‌भुत और हास्य रस का भी प्रयोग हुआ है।

3.7.2.4 भक्ति की भावना

कृष्ण-भक्ति के सभी संप्रदायों में कांताभाव की भक्ति को अधिक महत्व दिया गया है। निम्बार्क संप्रदाय में स्वाकीया-भाव पर ज़ोर दिया गया है। चैतन्य संप्रदाय में परकीया-प्रेम में माधुर्य भाव, वल्लभ संप्रदाय में परकीया भाव है। परकीया भाव आदर्श प्रेम का प्रतीक है। कृष्ण-भक्ति काव्य में दास्य भाव की भक्ति का चित्रण है।

3.7.2.5 पात्र तथा चरित्र-चित्रण

कृष्ण-काव्य में कृष्ण-जीवन के कोमल अंशों का चित्रण मिलता है। नायक श्रीकृष्ण में मानव तथा अतिमानव के विरोधी तत्वों का मिश्रण है। महाभारत के नीति कुशल, योद्धा कृष्ण के स्थान पर हिंदी कवियों के कृष्ण बालगोपाल एवं साँवले-सलौने छलिया कृष्ण हैं। नंद-यशोदा, गोपी-गोप कृष्ण के प्रति वात्सल्य तथा सख्य रूप में प्रेम को दर्शाते हैं। राधा रसरूपिणी है। कृष्ण के सखा उद्धव का महत्वपूर्ण चरित्र है।

3.7.2.6 प्रकृति-चित्रण

हिंदी कृष्ण-काव्य में भाव की पृष्ठभूमि के रूप में प्रकृति-चित्रण हुआ है। उद्दीपन के लिए भी प्रकृति का चित्रण है। हिंदी कवियों ने प्रकृति के मनोरम तथा अनुकूल, भयानक तथा प्रतिकूल रूपों के चित्रण में अपना कौशल दिखाया है। मानव-प्रकृति के चित्रण में कवियों ने अपनी दक्षता का परिचय दिया है।

3.7.2.7 कृष्ण-काव्य का सामाजिक पक्ष

कृष्ण-भक्ति काव्य मुख्य रूप से लीलावादी काव्य है। किंतु इस काव्य में तत्कालीन सामाजिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक दशा का यथार्थ वर्णन भी मिलता है। सूर के काव्य में परोक्ष रूप में समाज की झलक मिलती है। कवियों ने कलियुग के प्रभाव के अंतर्गत वर्णाश्रम-धर्म पतन, सामाजिक कुरीतियों तथा धार्मिक विडंबनाओं का चित्रण किया है।

3.7.2.8 काव्य के रूप

कृष्ण-काव्य मुख्यतः गेय मुक्तक रूप में लिखा गया है। संपूर्ण कृष्ण-काव्य में प्रबंध रचना कम पायी जाती है। सूर के काव्य में ब्रजवासी कृष्ण की पूरी कथा का वर्णन है। नंददास के

भंवरगीत, रुक्मिणी मंगल तथा रास पंचाध्यायी में कथात्मकता की मनोवृत्ति मिलती है। कृष्ण-काव्य में कथात्मक सूत्रों-कृष्ण-जन्म, गोकुल-आगमन, शिशु-लीला, नामकरण, अन्न-प्राशन, वर्षगांठ आदि संस्कारों का चित्रण हुआ है।

3.7.2.9 शैली

कृष्ण-काव्य में प्रमुख रूप से गीति-शैली का प्रयोग किया गया है। इसमें भावात्मकता, संगीतात्मकता, वैयक्तिकता, संक्षिप्तता और भाषा की कोमलता आदि है। सूर-सागर में भावव्यंजना की अनेक शैलियाँ मिलती हैं।

3.7.2.10छंद

कृष्ण-काव्य में अधिकांश रूप में गीतिपदों का प्रयोग हुआ है। कलात्मक प्रसंगों में चौपाई, चौबोला, सार एवं सरसी छंदों का प्रयोग है। नंददास के रूप-मंजरी और रास-मंजरी में दोहा त्था चौपाई छंदों का प्रयोग किया गया है। इस काव्य में दोहा-रोला तथा रोला-दोहा का मिश्रित रूप भी मिलता है। इसके अतिरिक्त काव्य में कवित्त, सवैया, छप्पय, कुंडलिया, गीतिका, हरिगीतिका छंदों का प्रयोग भी हुआ है।

3.7.2.11भाषा

कृष्ण-भक्त-कवियों में सूरदास का स्थान प्रमुख है। इनके अतिरिक्त अष्टछाप के अन्य कवि भी उल्लेखनीय हैं। भाव-पक्ष एवं कला-पक्ष की दृष्टि से भक्तिकाल को कुछ आलोचकों ने स्वर्ण युग माना है।

4 रीतिकाल (संवत् 1600-1900)

सामान्यतया संवत् 1700 से 1900 के काल को हिंदी साहित्य में 'रीतिकाल' के नाम से अभिहित किया गया है। रीतिकालीन हिंदी साहित्य में जीवन के प्रति भौतिक दृष्टिकोण को अपनाया गया है। रीतिकाल में पांडित्य प्रदर्शन की प्रवृत्ति के दर्शन होते हैं। कवि-कर्म एवं आचार्य-कर्म, दोनों का निर्वाह एक साथ होता रहा। कविता में भावुकता तथा कला का समन्वय है। राज्याश्रित कवि ही साहित्यकार थे। साहित्य राजपथ का साहित्य रहा। रीति-साहित्य में विलासिता की प्रधानता भी रही।